सभी किसान परिवारों के लिये आय सुरक्षा

1995 से 2012 तक आठ साल की अवधि में 2.85 लाख किसानों (राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो) ने आत्महत्या की है। जबकि 2004 से 2010 की अवधि के दौरान शानदार नौ प्रतिशत की विकास दर को लेकर जश्न मनाया जा रहा था। किसानों की आत्महत्या और ज्यादा पांच हजार प्रति वर्ष की दर से जारी थी। यानी हर आधे घंटे में एक किसान आत्महत्या कर रहा था और लाखों अन्य इसी तरह के अवसाद से पीड़ित थे। अगर अन्य विकल्प मौजूद हों तो लगभग 40 प्रतिशत किसान खेती छोड़ने के इच्छुक हैं (एनएसएसओ, 2005) । जनगणना के आंकड़ों के अनुसार 2001 से 2011 के बीच भारत में 85 लाख से अधिक लोगों ने अपनी किसान हैसियत खो दी (1991 से 1.5 करोड़) । औसतन रोजाना 2300 किसान खेती करना छोड़ रहे हैं। हालांकि यह देखना दिलचस्प है कि हर कोई खेती छोड़ नहीं रहा है। खेतिहर मजदूरों की संख्या बहुत अधिक बढ़ रही है। (2001 से 2011 के बीच 3.75 करोड़ अधिक हो गये।)

भारत 9 प्रतिशत की उच्च विकास दर की अवधि के दौरान काम के लिये तैयार हुए 550 लाख लोगों में से केवल 20 लाख ही रोजगार के अवसर पैदा हुए। वस्तुतः संगठित क्षेत्र आबादी के केवल नौ प्रतिशत लोगों को ही रोजगार दे रहा है जबकि कृषि क्षेत्र में आबादी के करीब 55 प्रतिशत लोगों को रोजगार मिल रहा है। अन्य क्षेत्रों में रोजगाररहित विकास को देखते हुए कृषि से पलायन न केवल आर्थिक रूप से गैर टिकाऊ है बल्कि ग्रामीण इलाकों से पलायन नगरीय इलाकों और कानून तथा व्यवस्था की स्थिति को भी ध्वस्त कर रहा है। भारत आगे आने वाले कई वर्षों तक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था ही रहेगा और इसका

घरेलू और वैश्विक स्तर पर बड़ा फायदा उठाया जा सकता है अगर नीति और निवेश का सही माहौल बनाया जाये। जब तक कृषि क्षेत्र के आर्थिक अवसाद को दूर नहीं किया जाता तब तक अन्य सभी आर्थिक विकास निरंतर नहीं रह पायेंगे।

राष्ट्रीय किसान आयोग (2006) ने खाद्यान्न और अन्य कृषि जिंसों के लाख टनों में उत्पादन से प्रगति के आकलन की परिपाटी से हटते हुए कहा है कि खेती में प्रगति का आकलन किसान परिवारों की शुद्ध आय की वृद्धि दर से किया जाना चाहिये.....। लेकिन दुर्भाग्य से खेती के संबंध में सरकारों द्वारा अपनाई जाने वाली आर्थिक नीतियों से किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं हुआ। कर्ज और आत्महत्या, भूख और कुपोषण लाखों भारतीयों की बदहाली को प्रदर्शित करता है और उस देश के लिये शर्म का विषय है जो वैश्विक आर्थिक शक्ति होने का दावा करता है। रिकार्ड खाद्य उत्पादन के बीच भूख और कुपोषण के शर्मनाक विरोधाभास को दूर करने की कोशिश भोजन के अधिकार कानून में की गई है। भूख और कुपोषण दूर करने के लिये हमें गरीबों तक खाद्य पहुंचा देने के नजरिये के पार जाकर देखना होगा। क्रूर मजाक ही है कि जो खाद्य उत्पादन कर रहे हैं वही गरीबों और कुपोषितों में शामिल हैं क्योंकि खाद्य सुरक्षा में उनका योगदान और खाद्य उत्पादन के उनके कौशल का समुचित मूल्यांकन व उसे पुरस्कृत नहीं किया गया।

गतिवान ग्रामीण अर्थव्यवस्था का लक्ष्य प्राप्त नहीं हुआ है और वस्तुतः किसान परिवारों की दरिद्रता का खेती से दूर 25 करोड़ परिवारों पर बुरा असर पड़ रहा है जिनमें खेतिहर मजबूर और बटाईदार किसान शामिल हैं। खाद्य एवं पोषण असुरक्षा उन लोगों को भी घेरे हुए है जो

खाद्य उत्पादन से जुड़े हुए हैं। कृषि मूल्यन और खाद्य सुरक्षा नीतियों सहित सरकार की विभिन्न नीतियां उपभोक्ता और उद्योगों को केन्द्र में रखकर तैयार की जाती हैं । इनमें यह नहीं सोचा जाता है कि बहुत से उपभोक्ता वास्तव में उत्पादक भी हैं जिससे उत्पादकों के लिये गंभीर समस्याएं पैदा हो जाती हैं।

सरकार की कई नीतियां हैं, खेती और किसान समुदायों को प्रभावित करने वाली मूल्य नीति सहित अनुदान और समर्थन प्रणाली हैं, आदान अनुदान, साख, बीमा, विस्तार , आपदा राहत एवं क्षतिपूर्ति और सिंचाई नीति आदि आदि । लेकिन किसान समुदाय की आय का आकलन या रिकार्ड नहीं किया जाता और फीडबैक की ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है जिससे सरकार केन्द्रित कार्रवाई करे। केवल जब समस्या सामने आती है या किसान आत्महत्या करते हैं तभी देश में चिंता पैदा होती है और सरकार ऋण माफी और राष्ट्रीय कृषि विकास योजना जैसे कदमों की घोषणा करती है। लेकिन तब भी कोई गंभीर आकलन और विश्लेषण नहीं नहीं होता कि क्या यह उपाय किसान समुदाय की आय में सचमुच कोई सुधार कर रहे हैं या नहीं। असंगठित क्षेत्र में कार्य की स्थिति और आजीविका को प्रोत्साहन पर अर्जुन सेनगुप्त समिति की रिपोर्ट (2007) एनएसएसओ आंकड़ों का उद्धरण देते हुए यह दर्शाती है कि औसतन देश में सभी किसान परिवारों के लिये कुल आय केवल रु. 2115/– प्रति माह है जबकि खर्च रु. 2770/– है। कम जोत के किसानों (कृषि जनगणना 2010–11 के अनुसार पूरी कृषि भूमि का 85 प्रतिशत) के मामले में आय व्यय का यह अंतर और ज्यादा है। सभी स्रोतों से किसान परिवार की अनुमानित औसत मासिक आय रु. 2115/– है खेती से आय बहुत ही दयनीय रु. 969/– है। एनएसएसओ आंकड़े (2003) यह दर्शाते हैं कि 48.6 प्रतिशत किसान परिवार कर्जदार हैं और अखिल भारतीय स्तर पर

प्रति ऋणग्रस्त किसान परिवार अनुमानित औसत बकाया ऋण राशि रु. 25895 है। ऐसे परिदृश्य में पंजाब की स्थिति भी कोई अलग नहीं है जहां किसी भी कीमत पर उच्च पैदावार का लक्ष्य हासिल करने की सघन खेती की प्रणाली है । राज्य में सभी स्रोतों से प्रति किसान परिवार औसत प्रतिदिन आय रु. 165/– है।

गंभीर समस्याएं

–राज्य द्वारा प्रोत्साहित सघन खेती (उच्च बाह्य आदान) मॉडल के कारण खेती की बढ़ती लागत जिसमें केवल अधिक पैदावार पर ही ध्यान केन्द्रित रहता है : बहुत अधिक संख्या में किसानों को किसान हितैषी नियमों और शर्तों पर संस्थागत ऋण का लाभ नहीं मिल पाता जिससे यह सघन खेती का प्रतिमानकिसानों को ऋणग्रस्तता की ओर धकेलता है। खेती का यह प्रतिमान किसानों के संसाधन आधार की उत्पादकता को भी देर सबेर प्रभावित करता है। विस्तार, आदान अनुदान, किसान हितैषी नियामक तंत्र को राज्य का समर्थन वापस लिये जाने से खेती की बढ़ती लागत का प्रभाव और अधिक हो जाता है।

–पुरस्कारस्वरूप मूल्य नहीं : घरेलू मूल्य नीति में अक्सर खेती की लागत भी नहीं निकल पाती जो कि सरकारी तरीके से आकलित की जाती है और जिस तरीके से लागत का अनुमान लगाया जाता है उसको लेकर गंभीर आपत्तियां भी दर्ज कराई जाती रही है।

– प्रतिकूल अंतरराष्ट्रीय व्यापार सेवा एवं शर्तें : कृषि निर्यात नीतियां किसानों के हितों में तय नहीं की जातीं लेकिन आम तौर पर उद्योग के पक्ष में इनका झुकाव रहता है। इसके अलावा अन्य देशों के सामान और

जिंसों के लिये अपने बाजारों को खोलने से हमारे किसानों को दूसरी जगहों के उच्च अनुदान प्राप्त उत्पादों का सामना करना पड़ता है।

–आपदा सहित विभिन्न जोखिमों के किसानों पर प्रभाव को कम करना :

अन्य कारणों से फसल तबाह होने सहित सूखा और अन्य आपदाओं की स्थिति में जोखिम से किसानों के संरक्षण के लिये विद्यमान तंत्र अपर्याप्त है और बहुधा यह अस्तित्वहीन होता है। इसके अतिरिक्त कृषि व्यवसाय जगत का अधिनियमन किसानों के हित संरक्षण के लिये तैयार नहीं किया गया है एवं ऐसे कई नियामक प्रारूपों में पर्याप्त देनदारी तंत्र का अभाव है।

–किसानों के जीवनयापन की लागत में बढ़ोतरी : जीवनशैली की महत्वाकांक्षाएं बदल रही हैं और स्वास्थ्य संभाल व शिक्षा जैसी बुनियादी सेवाओं से सरकार हट रही है जिससे ग्रामीण परिवारों को और अधिक आय की जरूरत भी बढ़ रही है। समर्थन मूल्य प्रधाली में इस लागत का आकलन नहीं किया जाता। उदाहरण के लिये मूल्य नीति तय करते समय यह माना जाता है कि खेती की लागत को शामिल कर लेना काफी है।

बड़ी संख्या में किसानों को वास्तव में समर्थन प्रणाली और अनुदान का लाभ नहीं मिल पाता : यह उनकी संरचना और उनके कियान्वयन दोनों पर लागू होता है। भारत में खेती और किसानों को अनुदान अपेक्षाकृत कम है विशेषकर छोटे और बारानी किसानों को। अनुदान की बहुत बड़ी मात्रा आदान अनुदान के रूप में होती है जो किसानों को नहीं बल्कि उद्योगों को लाभ पहुंचाती है और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिये खाद्य अनुदान के रूप में होती है । इस प्रकार जहां रसायन उर्वरक उद्योग के लिये भारी अनुदान है उन किसानों को कोई सहायता नहीं दी जाती जो मिट्टी की उर्वरता के लिये स्थानीय विधि/पद्धति अपनाते हैं या अपना बीज प्रयोग करते हैं।

–संस्थागत ऋणप्रदाताओं द्वारा कृषि साख बहुत अपर्याप्त है :हालांकि प्राथमिकता क्षेत्र में होने के बावजूद ऋण , स्थान आदि से संबंधित मानदंडों में इतनी अधिक छेड़छाड़ है कि वर्तमान स्थिति पुराने जमाने में विद्यमान व्यवसाि से भी अधिक बदतर है। ऐसा देखा गया है कि ज्यादातर लाभ किसानों की बजाय इस काम में लगी संस्थाओं के खाते में गया है।

–बटाईदार किसान और महिला किसान अदृश्य और उपेक्षित : चूंकि भारत में किसान की औपचारिक पहचान भूमि के स्वामित्व से जुड़ी है और ऋण एवं बीमा जैसे समर्थन किसान की पहचान पाने के बाद ही मिलते हैं महिला तथा बटाईदार किसान किसी भी अनुदान या समर्थन प्रणाली से वंचित हैं। किसानों के इन दोनों समूहों की पात्रता की ओर तुरंत ध्यान दिये जाने की जरूरत है , उसके लिये जरूरत पड़ने पर पात्रता के लिये भूमि स्वामित्व की जरूरत खत्म की जा सकती है। यद्यपि उनके लिये भूमि स्वामित्व हक उनकी खेती को निरंतर बनाए रखने के लिये मध्यम और दीर्घ अवधि का समाधान है।

मुद्रास्फीति किसानों के लिये आदान लागत और उनके जीवनयापन की लागत को बढ़ा देती है लेकिन सरकार का रवैया कृषि कूल्यों को कम करने का होता है जिससे किसान पर तिहरी मार पड़ती है। अंत में भारतीय किसान खुद पर भारी कीमत ढोकर दूसरों की सहायता करता नजर आता है। यह सतत समाधान नहीं है। अक्सर भारतीय किसानों को अपना प्रदश्नन सुधारने और खेती की पश्चिमी पद्धति की बराबरी करने का उपदेश दिया जाता है। लेकिन यह स्पष्ट है कि खेती का पश्चिमी मॉडल भारत को भविष्य की राह नहीं दिखा सकता जो कुछ कृषि उद्योगों को समर्थन देने के लिये भारी अनुदान पर टिका है और जहां दो प्रतिशत आबादी ही कृषि में संलग्न है। यह भारत में नहीं हो सकता विशेष तौर पर

जहां लाखों लोग खेती पर निर्भर हैं। भारत को विस्तृत नीति की जरूरत है जो देश के छोटे किसानों जो कि देश के कुल किसानों का 80 प्रतिशत से अधिक हैं के लिये खेती को व्यवहारिक आजीविका बनाने को लक्ष्य कर बनायी जाये। यह राष्ट्र की खाद्य सुरक्षा और गतिवान भारत की रीढ़ के रूप में मजबूत ग्रामीण अर्थव्यवस्था सुनिश्चित करने तथा राजनीतिक तौर पर स्थिर देश के लिये आवश्यक है।

खेती में आय सुरक्षा के समाधान

कृषि आय और कल्याण को प्रमुख मानदंड बनाना होगा जिनके लिये कृषि और ग्रामीण विकास मंत्रालयों को जवाबदेह बनाना होगा। इसके लिये मौलिक बदलाव करना होगा कि खेती को तकनीकी की बजाय आजीविका के विषय के तौर पर देखना होगा।

–एक कृषि आय आयोग गठित करने की जरूरत है जो यह देखे कि सभी किसान परिवारों को जीवन यापन की न्यूनतम आय हासिल हो। इस आयोग का एक मुख्य कार्य यह होगा कि किसानों की विभिन्न श्रेणियों (भू स्वामित्व श्रेणियां, बारानी विरुद्ध सिंचित, फसल वार, कृषि प्र्यावरणीय क्षेत्र) के लिये वार्षिक आय सर्वेक्षण करे। इससे कोई भी हस्तक्षेप सार्थक तौर पर प्रभावी होगा।

–किसान द्वारा लगाई गई लागत का सही मूल्यांकन कर , इस लागत पर तार्किक लाभ एवं जीवन यापन की लागत शामिल कर वर्तमान समर्थन मूल्य प्रणाली का पुनर्गठन किया जाना चाहिये तथा उपार्जन को विस्तार देकर अधिक प्रभावी किया जाना चाहिये। बाजार हस्तक्षेप योजना को प्रभावी बनाकर सभी फसलों को इसके दायरे में लाना चाहिये जिससे आधार मूल्य हकीकत में सुनिश्चित हो।

–मूल्य क्षतिपूर्ति तंत्र बनाया जाना चाहिये जो किसान द्वारा वसूली गयी कीमत और न्यूनतम गारंटी मूल्य के बीच का अंतर किसान को प्रदान करे।

– जहां भी आवश्यक हो विशिष्ट फसल या विशिष्ट क्षेत्र के लिये वार्षिक आधार पर प्रत्यक्ष आय समर्थन दिया जाना चाहिये।

–भारत को कृषि आजीविका सुरक्षा को सार्वभौमिक प्राथमिक नीति बनाना चाहिये जिस पर विश्व व्यापार संगठन और मुक्त व्यापार अनुबंध सहित किसी भी बहुपक्षीय या द्विपक्षीय वार्ता में कोई समझौता नहीं हो सकता है। इसका अर्थ किसी भी समझौते को नकारना होगा जो समान आधार पर नहीं हुआ हो। इसके अतिरिक्त संसद, राज्य सरकारों और किसान संगठनों सहित सभी भागीदारों से विस्तृत परामर्श किये बिना कोई भी समझौता अंतिम रूप नहीं लेना चाहिये।

–सभी ग्रामीण परिवारों को दायरे में लेने वाला एक व्यापक सामाजिक सुरक्षा कानून बनाकर लागू करना होगा जिससे स्वास्थ्य देखभाल, दुर्घटना, मातृत्व और वृद्धावस्था लाभ मिल सकें।

– साख, बीमा, विस्तार , बाजार हस्तक्षेप योजना और वेयरहाउस रसीद योजना आदि सहित अन्य योजनाओं से संबंधित वर्तमान हस्तक्षेप की व्यवस्था को अपनी संरचना और क्रियान्वयन में प्रभावी बनाना होगा जिससे सभी किसान परिवारों को न्यूनतम जीवन यापन आय का मकसद पूरा हो।

–समुचित अधोसंरचना, पूंजी व क्षमता निर्माण के रूप में समर्थन के साथ सामूहिक विपणन प्रयासों के लिये किसानों के समूह बनाने और उन्हें मजबूत करने की तत्काल आवश्यकता है। इन समूहों के लिये क्षमता निर्माण व विस्तार समर्थन को व्यापक पैमाने पर पर्यावरणीय खेती की विधियां अपनाकर एवं स्थानीय एवं भीतरी आदान को बढ़ावा देने वाली

विधियों/नजरियों को अनुदान देकर खेती की लागत कम करने की दिशा में बढ़ना चाहिये।

–कृषि कार्यों की मजदूरी लागत को भी महात्मा गांधी रोजगार गारंटी योजना से अलग अन्य सहायता स्रोत से अनुदान में शामिल किया जाना चाहिये। लेकिन सहायता के वास्तविक प्रदाय के लिये इसमें वही संस्थागत ढांचा इस्तेमाल किया जाये।

यह देश की खाद्य सुरक्षा के हित में है कि नकदी फसलों की बजाय विविध फसलों को प्रोत्साहन दिया जाये और इन्हें उगाने वाले किसानों को पुरस्कृत किया जाये। भारत में जहां 25 प्रतिशत आबादी ,करीब 20 करोड़ लोग भूखे हैं, न केवल यह सामाजिक जरूरत है बल्कि राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता और सुरक्षा का भी विषय है।

आशा का मूल्य क्षतिपूर्ति/अल्प मूल्य भुगतान/मूल्य बीमा प्रस्ताव

प्रस्ताव का सार यह है कि फसल वार न्यूनतम लक्ष्य मूल्य निर्धारित किया जाये और जब वसूला गया औसत कृषि उपज मूल्य इस न्यूनतम लक्ष्य मूल्य से कम हो तो उतनी कम राशि का सरकार द्वारा किसान को भुगतान किया जाये। यह महंगाई की चिंता को दूर कर किसानों के लिये समुचित मूल्य, उपार्जन या समर्थन मूल्य में किसी तरह की कमी को पूरी करेगा और कई ऐसी फसलों को भी शामिल करना सुनिश्चित करेगा जिनके लिये अभी कोई उपार्जन तंत्र नहीं है। इस प्रावधान को आरंभिक तौर पर खाद्य फसल के लिये प्रस्तावित किया गया है। C 2’ + 50 % को आधार के रूप में

प्रस्तावित किया गया है C2' कुछ सुधारों के साथ C2 है। जिला या तालुका को इकाई मानकर यह व्यवस्था लागू की जा सकती है। जिला या तालुका स्तर पर फसल उपज मूल्य और प्रति एकड़ पैदावार के औसत के आधार पर भुगतान की गणना की जा सकती है। न कि प्रत्येक व्यक्तिगत किसान के लिये आंकड़ों के आधार पर। यह व्यवस्था महिलाओं, बटाईदारों सहित वास्तविक किसानों पर लागू होना चाहिये।

यह प्रस्ताव इस नजरिये पर आधारित है कि अगर सरकार और समाज खाद्य कीमतों को कम रखना चाहता है तो भार किसानों पर नहीं पड़ना चाहिये। C2+50% का फार्मूला राष्ट्रीय किसान आयोग और कृषि उत्पादन पर नये कार्यदल की प्रमुख अनुशंसाओं में से एक है। मूल्य क्षतिपूर्ति तंत्र इस मांग को बाजार मूल्य सीधे बढ़ाए बिना लागू करता है। सरकार के समर्थन मूल्य स्वतंत्र तौर पर तय किये जा सकते हैं। ध्यान रहे कि यह व्यवस्था उपार्जन और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के प्रतिस्थापन की तरह प्रस्तावित नहीं की गयी है। हमे ं विश्वास है कि उनमें सुधार और विस्तार किया जाएगा जिससे उनमें और फसलों को शामिल किया जा सके। लेकिन हम महसूस करते हैं कि यह प्रणालियां किसानों को लाभप्रद मूल्य पूरी तरह सुनिश्चित नहीं कर सकतीं क्योंकि उनकी प्राथमिकताएं भिन्न हैं।

कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि इस प्रणाली को बीमा के ढांचे में रखा जाये जहां व्यक्तिगत उतपादक से अपना नाम दर्ज कराने की अपेक्षा हो जिससे उसको लागू करने मे ं सरलता होगी। यह प्रणाली न केवल खेती आय बढ़ाएगा बल्कि उत्पादन और उत्पादकता को भी पुरस्कृत करेगा क्योंकि भुगतान वास्तविक स्थानीय उत्पादन स्तरों से जुड़ होगा। यह वास्तविक बिक्री से नहीं जुड़ा है जिससे यह उन किसानों को भी लाभ पहुंचाएगा जो अपनी उपज की बिक्री नहीं करते।

आय सुरक्षा प्रणाली के लिये दिशानिर्देश

खेतिहर परिवारों के लिये न्यूनतम जीवनयापन आय का आयस्तर सुनिश्चित करने के लिए निम्न आवश्यक है :

1) किसान परिवारों का आय आकलन नियमित आधार पर किया जाना चाहिये और विभिन्न श्रेण्यिों तथा क्षेत्रों के किसान परिवारों की आय को जानने के लिये आय पैमाना या सूचकांक का उपयोग करना चाहिये। यह किसानों की स्थिति की असली तस्वीर बताएगी। केन्द्र और राज्य स्तर पर गठित किए जाने वाले किसान आय आयोग को यह काम दिया जा सकता है।

2) नीति इस तरह बनायी जानी चाहिये कि खेती करने वाले असली किसान को उसका लाभ मिले वह चाहे बटाइदार किसान हो, या महिला किसान बजाय कि जमींदार को जिसका खेती से कोई सरोकार नहीं रहता। यह सुनिश्चित करने के लिये तंत्र होना चाहिये कि वास्तविक खेती के लिये ही सहायता प्रदान की जाये।

3) आय सुरक्षा नीति का मतलब यह नहीं है कि ग्रामीण आबादी की व्यापक श्रेणी को प्रत्यक्ष आय भुगतान कर दिया जाये। सरकार के विभिन्न समर्थन उपायों का प्रयोग न्यनतम आय स्तर हासिल करने के लिये किया जा सकता है जैसे कि लाभप्रद मूल्य, मूल्य क्षतिपूर्ति, बीमा, खेती की लागत कम करना, कम ब्याज दरों पर कृषि ऋण का विस्तार एवं आसान पहुंच, आपदा राहत, पट्टे की लागत कम करना, किसान उत्पादक संगठन बनाना आदि। इनमें से कई समर्थन प्रणालियां पहले से विद्यमान हैं और यह प्रस्तावित नहीं हैं कि इन्हें खत्म कर दिया जाये। बेहतर होगा कि आय

सुरक्षा ढांचे में सरकार को इसके लिये जवाबदेह बनाया जाना चाहिये कि यह सभी समर्थन प्रणालियां किसान समुदायों की आजीविका हासिल करने में कारगर बने सकें। ऐसी परिस्थितियों में जहां इन सभी उपायों के बाद भी किसान न्यूनतम आय स्तर हासिल नहीं कर पा रहे हैं तब किसानों को प्रत्यक्ष आय भुगतान किया जाना चाहिये – इस तरह जवाबदेही लाकर।

4) हमारे देश में बड़ी संख्या और कार्य करने की स्थितियों को देखते हुए आय का आकलन और अगर प्रत्यक्ष आय भुगतान के पात्र किसान हैं तो उनका निर्धारण समूह स्तर पर ही किया जा सकता है न कि व्यक्तिगत स्तर पर। उदाहरण के तौर पर किसी सीजन विशेष में रायलसीमा क्षेत्र के मूंगफली किसान प्रत्यक्ष आय भुगतान की कुछ राशि के लिये पात्र हो सकते हैं और अगले साल में विदर्भ के ज्वार किसान इसके लिये पात्र हो सकते हैं। समानता का सिद्धांत प्रणाली में ही समाहित है क्योंकि यह प्रति परिवार न्यूनतम आय स्तर पर आधारित है। तीन एकड़ जमीन का किसान किसी साल में आय सीमा के नीचे आ सकता है लेकिन दस एकड़ वाला किसान आय सीमा के ऊपर ही रहने की संभावना है और प्रत्यक्ष आय भुगतान का पात्र नहीं होगा। हालांकि दस एकड़ का किसान बाकी उपरोक्त (3) में वर्णित उपायों के लाभ का पात्र होगा, जिनमें से कई एकड़ के समानुपाती हैं।

————————————————————